आधुनिक हिन्दी जैन महाकाव्य: सीमा और सम्भावना

—डॉ० इन्दु राय

महाकाव्य किसी भी वाङ्मय की सर्वाधिक समुन्नत और समृद्ध विधा है। आकार-प्रकार की महार्घता, चिंतन की गम्भीरता और रचनात्मक गरिमा में यह विधा विशिष्ट है। महाकाव्य विश्वजनीन मानवीय आदर्शों, संवेदनाओं तथा मानवीय चेतना के विकास को **रूपायित** करने वाला महत् काव्य है। अपने महत् उद्देश्य के कारण ही वह कवि-यश का मलाधार होता है। महाकाव्य के सृजन के मूल में लक्ष्य की महत्ता तो रहती ही है उसके व्यापक रचना-फलक में युगजीवन के समस्त सन्दर्भ स्वत: अन्तर्भूत हो जाते हैं। आधुनिक युग में हिन्दी महाकाव्यों का उदय जिस पृष्ठभूमि में हुआ है उसे राजनैतिक तथा धार्मिक नवजागरण का प्रभाव कहा जा सकता है। भारत में राजनीति का स्वरूप भी धर्म से सम्बद्ध रहा है, इसीलिए राजनीति को भी राजधर्म कहा गया है। धार्मिक चेतना का ही व्यापक रूप भारतीय नवजागरण के मूल में सक्रिय रहा है और हिन्दी के अधिकांश महाकाव्यों की रचना इसी धार्मिक चेतना से अनुप्राणित है। इस रत्नराशि में जैन महाकाव्यों का स्थान पर्याप्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि जैन साहित्य की पृष्ठभूमि एक विशिष्ट धर्म पर अवलम्बित है किन्तु उसका काव्यतात्विक मूल्य उपेक्षणीय नहीं है। दुर्भाग्य से **अनुसंधित्सुओं** व आलोचकों का ध्यान जैन साहित्य की ओर बहुत कम गया है। उनकी धारणा यही रही है कि वह साम्प्रदायिक साहित्य है, अतएव उसके सौन्दर्योद्घाटन के प्रयास भी विरल रूप से हुए हैं। जैनेतर हिन्दी महाकाव्यों पर तो महत्त्वपूर्ण शोध कार्य हुए हैं, किन्तु आधुनिक हिन्दी जैन प्रबन्ध काव्यों, उपन्यासों, कहानियों आदि का शोधपरक अध्ययन अपेक्षित है।

महाकाव्य विधा को परिभाषित करना कठिन है। परिभाषाएं या तो अतिव्याप्त होती हैं अथवा अव्याप्त। फिर प्रतिभावान् कवि परिभाषाओं या पूर्वनिर्दिष्ट लक्षणों की सीमा स्वीकार नहीं करता। महाकाव्य में युगीन चेतना व्याप्त रहती है अत: उसकी रचना-प्रक्रिया और स्वरूप में भी युगानुरूप परिवर्त्तन होता रहता है। तदपि हम कह सकते हैं कि महाकाव्य प्रगतिशील, सर्गबद्ध, प्रकथनात्मक रचना होती है जिसका साध्य अथवा महत् उद्देश्य युगजीवन की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना-तथा सामाजिक, धार्मिक या मनोवैज्ञानिक आदि विविध क्षेत्रीय अपेक्षाओं को पूर्ण करना होता है। **बृहदात्मकता** एवं अलंकृतिपूर्ण रचना विन्यास ही महाकाव्यत्व का द्योतक नहीं वरन् पर्याप्त भावगाम्भीर्य, सुगठित कथ्य, सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना का सर्वांगीण सुमधुर प्रस्फुटन, विख्यात नायक (जो किसी भी जाति, वर्ण या लिंग का हो सकता है) का आदर्शोन्मुख जीवन-चित्रण लघु आकार के काव्य को भी महाकाव्य पद का अधिकारी बना देता है। अत: महाकाव्य में वह प्राणवत्ता, प्रभावान्विति और रसोद्रेक-क्षमता होनी चाहिए जो उसे सर्वआस्वादनीय, सर्वजनीन और सर्वयुगीन बना सके।

महाकाव्य-लेखन गुरुतर कार्य है। महती काव्य प्रतिभा के अतिरिक्त उसके सृजन को वर्षों की अपेक्षा होती है। आज के त्वरित युग में कवि को अपने प्रयास का फलीभूत रूप देखने के लिए वर्षों की प्रतीक्षा प्रीतिकर नहीं लगती। यही कारण है कि विगत कुछ वर्षों से प्रदीर्घ कविताएँ लिखी जाने लगी हैं। इन प्रलम्बित कविताओं द्वारा कवि चतुर्दिक परिवेश को मूर्तिमंत कर सकने के साथ ही युगीन समस्याओं के चित्रण और समाधान प्रस्तुत कर देता है। अत: अभीष्ट की अभिव्यक्ति हेतु महाकाव्य-रचना की आवश्यकता अनुभव नहीं होती। इस 'त्वरा' **प्रवृत्ति** के अतिरिक्त जैन महाकाव्यकारों की एक अन्यतम कठिन सीमा है—वर्ण्य में रागात्मक घात-प्रतिघात व्यंजित कर सकने की दुर्वहता। किसी भी तीर्थंकर (विशेषकर बाल यति) के जीवनवृत्त पर महाकाव्य-प्रणयन अत्यंत कठिन कार्य है, क्योंकि जहाँ मात्र शान्त रस ही है और किसी अन्य जागतिक स्थिति की कोई सम्भावना नहीं, वहाँ काव्य के लालित्य व उसकी सुषमा का सम्यक् निर्वाह कैसे सम्भव हो सकता है ? इसके अतिरिक्त तीर्थंकरों की जीवनी जिस रूप में उपलब्ध है उसमें ऐतिहासिकता एवं मानवीय संवेदनाओं तथा रागात्मक वृत्तियां का संघर्ष गौण है। वस्तुत: जैनागमों में शलाका पुरुषों की साधना और मोक्ष प्राप्ति के प्रयत्न की कथा ही मुख्यरूप से वर्णित है।

सफल, उत्कृष्ट महाकाव्य में अपेक्षित शृंगार, वीर आदि रसों की निष्पत्ति के अनुकूल प्रसंग सभी तीर्थंकरों के जीवन में उपलब्ध नहीं होते, अत: प्राचीन जैन महाकाव्यकारों ने जब कुमारावस्था में दीक्षा धारण कर लेने वाले तीर्थंकरों की जीवन-गाथा रची

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो उन्हें शृंगार रस की व्यंजना के लिए मुक्ति को नायिका बनाना पड़ा तथा कामदेव, रुद्रदेव आदि को प्रतिद्वन्द्वी बनाकर वीर रस के उपादान जुटाने पड़े। सदसद् कर्मों का फल चित्रित करने के लिए प्रमुख पात्रों के पूर्व भव-भवान्तरों का विस्तृत वर्णन तथा महत्त्वपूर्ण घटनाओं से पूर्व तत्सम्बन्धी स्वप्नों व स्वप्नफलों का उल्लेख जैन महाकाव्यों की कथानकगत सीमा ही कही जा सकती है, तथापि कई आधुनिक महाकाव्यकारों ने इन सीमाओं, आक्षेपों व चुनौतियों को अविकल झेलकर, तीर्थंकरों के जीवन को सम्पूर्ण गरिमा प्रदान करते हुए सरल तथा मार्मिक रूप में अभिव्यक्त किया है। इन प्रबुद्ध महाकाव्यकारों ने परम्परा का पालन अवश्य किया है पर परम्परा की रुढ़ियों का नहीं। वैसे भी आधुनिक हिन्दी महाकाव्य अपने नवीन परिपार्श्वों में, पाश्चात्य प्रतिमानों के प्रभाव के अनन्तर भी पौराणिकता एवं भारतीयता से दूर नहीं रह सके हैं। उनकी इतिवृत्त योजना पर पौराणिक साहित्य का प्रभूत प्रभाव स्पष्ट है तथा उनकी सर्गबद्धता, वर्णन शैली, शैलीगत संयोजना, भाषात्मक अलंकृति, उद्देश्य (धर्म एवं मोक्ष पुरुषार्थ की प्राप्ति), पात्र-परिकल्पना आदि पर प्राचीन भारतीय प्रबंधों का प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में देखा जा सकता है। आधुनिक हिन्दी जैन महाकाव्य भी अपनी समृद्ध पौराणिक व ऐतिहासिक पीठिका से अविच्छिन्न रूप से जुड़े हैं। जिस प्रकार आर्षग्रन्थ 'रामायण' व 'महाभारत' अधिकांश हिन्दी प्रबन्धकाव्यों के उपजीव्य हैं उसी भांति जैन महाकाव्यों के मूलाधार प्रथमानुयोगगत पुराण ग्रन्थ हैं।

जैन काव्य-साहित्य की उपलब्ध सामग्री के आधार पर कहा जा सकता है कि उसका निर्माण ईसा की प्रथम शताब्दी से प्रारम्भ हो गया था और दसवीं शती पर्यंत संस्कृत व उसके समानान्तर प्राकृत भाषाओं में अनेकों उत्कृष्ट जैन प्रबन्धों की रचना हुयी। इसी मध्य अपभ्रंश जनमानस में स्थान ग्रहण करती जा रही थी, अतः लगभग १६वीं शती तक अपभ्रंश भाषा में प्रभूत जैन प्रबन्धकाव्य लिखे गए। १५ वीं शती में कवि साधारुकृत 'प्रद्युम्नचरित्र' (परदवणु चउपई) को प्रथम हिन्दी जैन प्रबंधकाव्य माना जाता है, तदपि उन्नीसवीं शताब्दी तक के प्रबंधों की भाषा पर अपभ्रंश, राजस्थानी, गुजराती तथा अन्य प्रांतीय बोलियों का प्राधान्य स्पष्टतः देखा जा सकता है। खड़ीबोली हिन्दी का साहित्यिक रूप बीसवीं शती में ही हमारे समक्ष आया। बीसवीं शताब्दी के भी प्रथम पाँच दशक हिन्दी जैन महाकाव्य लेखन की दृष्टि से उदासीन रहे। कदाचित् कवि इसी धारणा से आक्रान्त रहे कि तीर्थंकर के जीवन पर आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट लक्षणों के आधार पर महाकाव्य रचना सम्भव नहीं, परन्तु पण्डित अनूप शर्मा ने 'वर्द्धमान' जैसे सरस महाकाव्य का सृजन करके अवरुद्ध मार्ग उद्घाटित कर दिया।

भारतीय ज्ञानपीठ, काशी से सन् १९५१ में प्रकाशित 'वर्द्धमान' १७ सर्गों तथा कुल १९९७ वर्ण वृत्तों में निबद्ध कलात्मक कोटि का महाकाव्य है जिसमें तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर का जीवनवृत्त क्षीण कथा-कलेवर के रूप में अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ, समस्त शैली में वर्णित है। महाकाव्यकार ने महावीर (काव्य-नायक) के इतिवृत्त वर्णन में श्वेताम्बर तथा दिगम्बर मान्यताओं में समन्वय-स्थापन की चेष्टा के साथ ही कल्पना का भी आश्रय लिया है, पर समन्वयवादी दृष्टि के अनन्तर भी जैन मान्यताओं की पूर्ण सुरक्षा नहीं हो सकी है। कवि का संस्कारगत ब्राह्मणत्व स्थान-स्थान पर मुखर है। काव्य के आरम्भिक छः सर्गों में नायक के माता-पिता (त्रिशला-सिद्धार्थ) के पारस्परिक प्रेम के विस्तृत चित्रण द्वारा राग पक्ष के अभाव को दूर करने का प्रयास किया गया है पर ये वर्णन राज-दम्पत्ति की गरिमा के बहुत अनुकूल नहीं हैं।

सन् १९५९ में कवि वीरेन्द्र प्रसाद जैन द्वारा रचित लघु आकार का महाकाव्य 'तीर्थंकर भगवान् महावीर' प्रकाशित हुआ। छः वर्षों के बाद कुछ परिवर्द्धन के साथ उसका दूसरा संस्करण श्री अखिल विश्व जैन मिशन, अलीगंज, एटा से प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत महाकाव्य में सात सर्ग तथा कुल १११९ पद्य हैं। कवि ने सर्गान्त में छन्द परिवर्तन के नियम का निर्वाह किया है और लोकरंजक भगवान् महावीर के सम्पूर्ण जीवनवृत्त को सरल, आडम्बररहित भाषा में सरस रूप में चित्रित किया है।

कवि धन्यकुमार जैन 'सुधेश' ने सन् १९५४ में 'परम ज्योति महावीर' महाकाव्य का सृजन प्रारम्भ किया था जो सन् १९६१ में श्री फूलचन्द जवरचन्द गोधा जैन ग्रन्थमाला, इन्दौर से प्रकाशित हुआ। कवि ने स्वयं अपनी कृति को "करुण, धर्मवीर एवं शान्त रस प्रधान महाकाव्य" कहा है। २३ सर्गों वाले इस बृहत्काय महाकाव्य में कुल २५१९ पद्य हैं जिनका नियमपूर्वक विभाजन किया गया है। प्रत्येक सर्ग में १०८ पद्य हैं तथा ३३ पद्य प्रस्तावना में पृथक् रूप से निबद्ध हैं। 'सुधेश' जी ने भगवान् महावीरकालीन राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्थिति के चित्रण का सफल प्रयास किया है, जैन दार्शनिक मान्यताएं भी अक्षुण्ण रही हैं। तीर्थंकर महावीर के सभी चातुर्मासों के वर्णन से कथानक में पूर्णता अवश्य आयी है, पर उससे अवांछित विस्तार तथा नीरसता का संचार ही हुआ है। तदपि आद्योपान्त चौपाई छन्द और सरल सुबोध भाषा में विरचित 'परम ज्योति महावीर' सफल महाकाव्य है।

श्री अखिल विश्व जैन मिशन, अलीगंज से सन् १९६४ में कवि मोतीलाल मार्तण्ड 'ऋषभदेव' कृत प्रबन्ध 'श्री ऋषभ-चरितसार' प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत प्रबन्ध को लघु आकार का महाकाव्य कह सकते हैं। मार्तण्ड जी ने जिनसेनाचार्य रचित महापुराण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की कथा को मात्र ७३५ पद्यों में समेट लिया है, अतः रचनात्मक प्रतिभा मुखर नहीं हो सकी है। काव्य की भाषा अवधी है जो खड़ी बोली हिन्दी के पर्याप्त निकट है। भाषा का अवधीपन मुख्यतः क्रियाओं में ही प्रकट है। कथानक को दोहा, चौपाई, सोरठा आदि छन्दों में संवारा गया है। प्रबन्ध काव्य का महत्त्व इस दृष्टि से बढ़ जाता है कि हिन्दी भाषा में आदि तीर्थंकर पर रचा जाने वाला यह एकमात्र महाकाव्य है।

मार्तण्ड जी के प्रबन्धकाव्य के पश्चात् उल्लेखनीय हिन्दी जैन महाकाव्य कवि वीरेन्द्र प्रसाद जैन प्रणीत 'पार्श्व प्रभाकर' है जो सन् १९६७ में श्री अखिल विश्व जैन मिशन, अलीगंज से प्रकाशित हुआ। आकार-प्रकार, भाषा और शैली में यह वीरेन्द्र जी की पूर्व कृति 'तीर्थंकर भगवान महावीर' के समान ही है। प्रस्तुत महाकाव्य में जैन परम्परा के २३ वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के पूर्व जन्मों से लेकर निर्वाण तक के जीवन को काव्य का आधार बनाया गया है। काव्य पर भूधरदास रचित 'पार्श्व पुराण' का प्रभूत प्रभाव है। 'पार्श्व प्रभाकर' में कुल १० सर्ग हैं तथा पद्यों की संख्या १३८५ है। कवि ने महाकाव्य का प्रारम्भ मगंलाचरण से न करके काशी राज्य के वैभव वर्णन से किया है, पर सर्गारम्भ से पूर्व 'प्रणत प्रणाम' के अंतर्गत कवि ने प्रभु पार्श्वनाथ की अनुप्रासमयी वन्दना की है। इस कृति के पश्चात् भगवान् महावीर के २५०० वें निर्वाणोत्सव पर भी कुछ उत्कृष्ट हिन्दी जैन महाकाव्य समक्ष आए।

महाकाव्यकार रघुवीर शरण 'मित्र' विरचित 'वीरायन' (महावीर मानस महाकाव्य) वीर निर्वाण संवत् २५०० में भारतोदय प्रकाशन, मेरठ से प्रकाशित हुआ है। कवि ने प्रभु महावीर की अमरवाणी के सुदूरगामी एवं दीर्घकालीन प्रभाव-प्रसार के उद्देश्य से 'वीरायन' महाकाव्य की रचना की है। यह महाकाव्य १५ सर्गों में विभक्त है—पुष्प प्रदीप, पृथ्वी-पीड़ा, तालकुमुदिनी, जन्म ज्योति, बालोत्पल, जन्म जन्म के दीप, प्यास और अंधेरा, संताप, विरक्ति, वनपथ, दिव्य दर्शन, ज्ञानवाणी, उद्धार, अनन्त तथा युगान्तर। जैसा कि सर्ग-शीर्षकों से स्पष्ट है तीर्थंकर महावीर की कथा चौथे सर्ग से प्रारम्भ होती है। स्थल-स्थल पर दिव्यादिव्य इष्टों से काव्य साफल्य एवं जनकल्याण और राष्ट्रोद्धार की याचना से कथा-प्रवाह बाधित हो गया है परन्तु भगवान् महावीर को वर्तमान सन्दर्भ में देखने से भारत की समस्याओं, कुरीतियों, अभावों आदि का निरूपण तथा उनके समाधान का सुन्दर निदर्शन हो सका है। इस भांति कथावस्तु की अपेक्षा 'वीरायन' लक्ष्य-सिद्धि, शिल्प-सौष्ठव एवं काव्यात्मक अलंकृति की दृष्टि से अधिक सफल रहा है।

भगवान् महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव पर ही आदर्श साहित्य संघ, चुरू (राजस्थान) से साध्वी मंजुला का भावनाप्रधान प्रबन्ध 'बन्धन मुक्ति' प्रकाशित हुआ। कवयित्री ने कथानक की अपेक्षा पात्रों के मनोभावों की मार्मिक अभिव्यक्ति को प्रमुखता दी है। महाकाव्यीय मानदण्डों के अनुसार कुछ न्यूनताएँ होते हुए भी विधा की दृष्टि से 'बन्धन मुक्ति' को महाकाव्य कहा जा सकता है। प्रस्तुत महाकाव्य में ९ सर्ग हैं—सिंहावलोकन, संकल्प, अभिनिष्क्रमण, साधना, संघर्ष, प्रतिबोध, उदारता, उद्धार तथा अहिंसा। 'सिंहावलोकन' सर्ग में काव्य-नायक तीर्थंकर महावीर के जन्म से लेकर युवावस्था तक की कथा का सूक्ष्म कलेवर स्मृति चित्र के रूप में अंकित है। दूसरे से सातवें सर्ग तक महावीर के वीतरागी, चिंतक, संघर्षरत, साधक एवं जगकल्याणक व्यक्तित्व की कथाभिव्यक्ति प्रांजल भाषा में सरसता सहित हुई है। आठवें 'उद्धार' सर्ग में चन्दना दासी की उद्धार कथा अत्यधिक हृदयस्पर्शी है। अन्तिम सर्ग में भगवान् महावीर के अहिंसा, अपरिग्रह और स्याद्वाद सिद्धांतों की सरल काव्यमयी व्याख्या निबद्ध है।

अवन्तिका के शब्दशिल्पी डॉ० छैल बिहारी गुप्त प्रणीत महाकाव्य 'तीर्थंकर महावीर' सन् १९७६ में श्री वीर निर्वाणग्रन्थ प्रकाशन समिति, इन्दौर से प्रकाशित हुआ है। 'सर्गबद्धो महाकाव्यम्' सूत्र के आधार पर कवि ने तीर्थंकर भगवान् महावीर के इतिवृत्त को आठ शीर्षकविहीन सर्गों में संयोजित किया है। महाकाव्यकार ने कथा-निर्वाह में ऐतिहासिक सत्य और जैन मान्यताओं (विशेषकर दिगम्बर आम्नाय) की सुरक्षा का पूर्ण ध्यान रखा है। प्रसाद एवं माधुर्य गुण सम्पृक्त भाषा की लयात्मकता श्लाघनीय है। विविध मात्रिक छन्दों के बीच में स्वतंत्र प्रगीतों का आयोजन भी सुन्दर बन पड़ा है। भावगरिमा, शिल्प-संयोजना, उद्देश्य की उदात्तता की दृष्टि से 'तीर्थंकर महावीर' एक सफल महाकाव्य है।

आधुनिक हिन्दी जैन महाकाव्यों की एक श्रेष्ठ उपलब्धि कवि अभयकुमार 'यौधेय' कृत 'श्रमण भगवान् महावीर चरित्र' है। यह महाकाव्य अगस्त १९७६ में भगवान् महावीर प्रकाशन संस्थान, मेरठ से प्रकाशित हुआ है। महाकाव्य में ९ सोपान हैं तथा प्रत्येक सोपान में विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत कथा का विस्तार किया गया है। 'यौधेय' जी ने ओज व प्रसादमयी भाषा में भगवान् महावीर की जीवन गाथा को श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार प्रस्तुत किया है। ब्राह्मणदम्पत्ति ऋषभदेव-देवानन्दा, अर्जुनमाली, सोमशर्मा ब्राह्मण, प्रसन्नचन्द मुनि, सेठ धनाऊ व शालिभद्र, बहुला दासी आदि की प्रासंगिक कथाओं के समावेश से 'श्रमण भगवान् महावीर चरित्र' इतिवृत्त प्रधान महाकाव्य हो गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपर्युक्त महाकाव्यों के अतिरिक्त 'अहोदानम्', 'भरतमुक्ति,' 'चरम तीर्थंकर महावीर' तथा 'सत्यरथी' उल्लेखनीय आधुनिक हिन्दी जैन प्रबन्धकाव्य हैं। मुनि विनयकुमार विरचित ६ सर्गों वाले 'अहोदानम्' काव्य में चन्दना सती के जीवन की मार्मिक व सरस अभिव्यक्ति है। 'भरत-मुक्ति' तेरापंथ के प्रसिद्ध आचार्य श्री तुलसी प्रणीत १३ सर्गों का वृहदाकार महाकाव्य है। श्रीमदविजय विद्या चन्द्र सूरि कृत प्रबन्ध 'चरमतीर्थंकर महावीर' भगवान् महावीर के २५०० वें निर्वाणोत्सव पर प्रकाशित हुआ। इस काव्यकृति को कवि ने ४१ रंगीन चित्रों से सज्जित किया है। कवि नीरव विरचित 'सत्यरथी' प्रबन्ध काव्य सन् १९७८ में प्रकाशित हुआ है। २२८ पृष्ठों के इस सरस काव्य में भगवान् महावीर का महत् जीवन प्रतीकात्मक शैली में अभिव्यंजित है।

हिन्दी जैन महाकाव्यों के अनुशीलन के उपरांत उनकी विशिष्टताओं के विषय में सार रूप से कहा जा सकता है कि इन महाकाव्यों की भित्ति जैनधर्म व दर्शन पर अवलम्बित है। सभी काव्यों के नायक कोई न कोई तीर्थंकर हैं तथा कवियों का महत् उद्देश्य नायक के गरिमासंभूत जीवन की पृष्ठभूमि में मानव को सांसारिक भोगेषणाओं से निर्लिप्त रखकर मुक्ति प्राप्ति के लिए प्रेरित करना है। तीर्थंकरों के चरित्र का अतिशय उत्कर्ष और उनके जीवन में अतिप्राकृत तत्त्वों के समावेश का उद्देश्य आराध्य (नायक) को आकर्षण का केन्द्र बनाकर उनके प्रति भक्त का अनन्य अनुराग जागृत करना; इष्ट की महत्ता व भक्त की लघुता प्रतिपादित करना तथा दैन्य भक्ति के रूप में आचरण की श्रेष्ठता का सन्देश देना है; स्वर्ग-नरक के उल्लेख तथा पूर्व जन्म-जन्मान्तरों की कथा-वर्णन के मूल में जैन कर्म सिद्धान्त की प्रतिष्ठापना करना है। इस प्रकार त्रिवर्ग के साधन द्वारा मोक्ष पुरुषार्थ की साध्यता ही जैन महाकाव्यों का अभीष्ट प्रतिपाद्य है। इन महाकाव्यों में पौराणिक परम्परा के अनुपालन के साथ ही नवीनता की झलक भी मिलती है। 'वीरायन', 'बन्धनमुक्ति' तथा 'श्रमण भगवान् महावीर चरित्र' में वर्ग-संघर्ष, शोषण के विरोध, आततायियों की भर्त्सना, सामाजिक विद्रूपता तथा मानव की स्वार्थ प्रवृत्ति आदि के चित्रण में आधुनिक मानववादी स्वर प्रबल हैं। हिन्दी जैन महाकाव्यों में प्रेम और शृंगार के चित्रों को सीमित रूप में ग्रहण किया गया है। कथ्य के अनुरोध से प्रधानता शान्त तदनन्तर भक्ति रस की है, शेष सभी रस शान्त रसावसित हैं। महाकाव्यों का कला पक्ष या शिल्प संगठन भी उदात्त व वैविध्यपूर्ण है। इनकी सृजनात्मक प्रेरणाओं के अन्तर्गत गरिमामयी भारतीय (मुख्यतः जैन) संस्कृति का पुनरुत्थान, युगपुरुष तीर्थंकरों की चारित्रिक गरिमा का निरूपण, वर्त्तमानयुगीन समस्याओं के समाधान की चेष्टा तथा मानव के उज्ज्वल भविष्य की महती आकांक्षा प्रधान है।

आधुनिक हिन्दी जैन महाकाव्यों की संख्या और सफलता को देखते हुए कुछ विद्वानों का यह आरोप कि "अब महाकाव्यों का कोई भविष्य नहीं" सारहीन-सा लगता है। जैसे-जैसे आगम स्रोतों का दोहन होगा, जैन कथाएं लोकमानस में प्रतिष्ठित होंगी और शलाकापुरुषों की चारित्रिक गरिमा से सम्बन्धित बद्धमूल धारणाओं में परिवर्त्तन आएगा, सरस एवं उत्कृष्ट जैन महाकाव्यों के सृजन की सम्भावनाएं बढ़ती जाएँगी। समय-समय पर होने वाले महत्त्वपूर्ण तथा राष्ट्रव्यापी धार्मिक अनुष्ठानों से भी काव्यसर्जकों को प्रेरणा प्राप्त होगी। यह सत्य है कि महाकाव्य के रूपविधान में पर्याप्त अन्तर आया है और आज भी वह रचनात्मक परिवर्तनों का मुखापेक्षी है पर इस सत्य से वैमत्य नहीं हो सकता कि महाकाव्य सर्वोत्कृष्ट काव्यरूप है, युग की चरम उपलब्धि है, कवि के यश का आधार है और इन विशिष्टताओं के कारण उसका भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल है।

जैन महाकाव्य और समाज चेतना

संस्कृत जैन महाकाव्यों के निर्माण की दिशाओं पर व्यापक विचार विमर्श के उपरान्त डॉ० मोहनचंद ने अपने शोध प्रबन्ध "जैन संस्कृत महाकाव्यों में प्रतिपादित सामाजिक परिस्थितियाँ" में यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया है—

संस्कृत जैन महाकाव्य भी जैन संस्कृति की सामुदायिक वर्गचेतना से प्रभावित होकर निर्मित हुए हैं। महाकाव्य विकास की विश्वजनीन प्रवृत्ति के अनुरूप ही प्राचीन भारतीय महाकाव्य परम्परा का निर्माण हुआ है तथा संस्कृत जैन महाकाव्यों का भी इसी सन्दर्भ में मूल्यांकन किया जा सकता है। ८ वीं शताब्दी से १४ वीं शताब्दी ई० के सामन्तयुगीन मध्यकालीन भारत से सम्बद्ध लगभग १६ संस्कृत जैन महाकाव्य महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों की दृष्टि से सफल महाकाव्य होने के अतिरिक्त इनमें युगीन चेतना के अनुरूप सामाजिक परिस्थितियों के प्रतिपादन की पूर्ण क्षमता विद्यमान है।

☐ सम्पादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org